समकालीन उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ

ओडेदरा भरतकुमार जे.

१.प्रस्तावना

आधुनिक हिन्दी उपन्यास की यात्रा को भारतीय समाज एवं खासकर मध्यम वर्ग की प्रगति के समानान्तर देखने से एक बात बराबर जाहिर होती है कि हिन्दी उपन्यास की धारा बार–बार समजोन्मुख और मध्यम वर्गीय रुझानों की और लौटती है । प्रारंभ के उपन्यासों में देवी पात्रों एवं अलौकिक घटनाओं का चित्रण होता था, लेकिन समकालीन उपन्यासों में ऐसी घटनाओं के स्थान पर साधारण जन जीवन की घटनाओं को स्थान दिया गया है । दूसरी तरफ समसामायिक जीवन का यथार्थ इतना सुक्ष्म जटिल एवं अद्रश्य है कि उसको पकड पाना ही सुजनात्मक्ता की सबसे बडी चुनौती है । वर्तमान समाज के शोषक तत्त्व द्रश्य नहीं है, वे नितान्त अद्रश्य है । आधुनिक मनुष्य बहुत सारी प्रतिकुलताओं के बीच खडा हुआ है । उसका स्वत्व ही कहीं गायब हो चुका है । उदारीकरण, शहरीकरण, निजीकरण, भूमण्ड्लीकरण आदि के कारण मनुष्य दिन–ब–दिन अपनी पहचान से वंचित होता जा रहा है । समकालीन लेखक वर्तमान समाज जीवन के यथार्थ चित्रों को पाढक वर्ग के सम्मुख रखकर अपने सामाजिक दायित्व की इति श्री करने का प्रयास करते हैं ।

२.समकालीन उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ

२.१ विवेकी राय

नमामि ग्राम्म् उपन्यास में विवेकी रायने गाँव की व्यथा व्यंग्य के रुप में पाठक के समक्ष रखा है । आधुनिक नगरीकरण के धक्के से गाँव गाँव नहीं रहा, किन्तु गाँव नगर थी नहीं बन सका वह एक विचित्र तरह की अधोगति की स्थिति में पडा है । गाँव का नगरीकरण एवं तज्जन्य मूल्यबध ने गाँव की आत्मा को झकझोरा जरुर है, पर कृषि एवं अन्य प्रकल्पों में विकास का पथ प्रशस्त किया है ।

मंगलभवन: विवेकी राय भारत पर चीन के आक्रमण से उत्पन्न त्रासदी को रेखांकित करता है – जो देश युग–युग से भारत का सांस्कृतिक मित्र था और भारत ने भाई–भाई का नारा देकर जिससे गहरी दोस्ती जमाई थी, वह शत्रु बन गया । इसके लिए जरुरी है – भीतर से उपजी विस्फोटक उत्साह की आग । अरे, वह सीमा की आग क्या साधारण थी ।

''वह इसके लिए ही उपाय है – युद्ध, निरंतर युद्ध, भीतर का युद्ध, बाहर का युद्ध (बस मोरचे पर भिडे है, उत्साह बना रहे) जय–पराजय के मोह में पडना व्यर्थ है । किसकी जय हुई, किसकी पराजय हुई, यह सवाल बेकार है । जय–पराजय तो एक ही सिक्के के दो पहलु है । असली चीज है सिक्के का खरा होना, ठनकते रहना वस मोरचे पर भिडे रहना, उत्साह का बना रहना''

२.२ रामधारीसिंह दिवाकर

स्वतंत्रता–प्राप्ति के बाद भारत की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक अवस्था में व्यापक परिवर्तन द्रष्टिगोचर होता है । स्वतंत्र भारत में लोकतांत्रिक पद्धति का कायम होना, संविधान में मौलिक अधिकार का प्रावधान, वयस्क मताधिकार से लोगों में जागरण का उदय, शिक्षा के प्रचार–प्रसाार से लोगों में चेतना का संचार, जमींदारी–प्रथा के

उन्मूलन के द्वारा ऊँची कही जाने वाली जातियों के वर्चस्व की काफी हद तक समाप्ति, दलित एवं पिछडी जाति में स्व और स्वाभिमान का उदय आदि से उत्पन्न स्थितियों दशाओं का चित्रण 'अकाल संध्या' में हुआ है, तो सवर्ण जातियों को मानसिकता का पोस्टमोर्टम भी । सर्वाधिक दु:खी वे लोग है, जो स्वयं कभी काम नहीं करते, परश्रम पर जीवन–निर्वाह करते हैं :

''बडका गाँव के लोगों का दर्द यही है कि अब खेतों में काम करन के लिए मजदूर नहीं मिलते, मिलते भी है तो मजदूरी ज्यादा । बाबू भैया कहकर काम कराओ । गया जमाना रोब जमाने का ।''

पिछडे और दलित वर्गो का प्रभावशाली लोगों में वे ही विकृतियों अपने चरम रुप में दिखाई दे रही है, जो तथाकथित ऊँची जातियों में थी । दयानंद यादव, एस.पी. रामबरन की संपन्नता उनकी भ्रष्टता की कहानी है । भाई हजरी और भाई बुद्धन माँझी के चरित्र निराशा का सीना फाडकर आशा की किरण जगाने की उम्मीद रखते है । नारी सशक्तीकरण की प्रतीक है कजरी, जो अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करती है । दलितों में दलित चतना जगाती है । साक्षरता अभियान चलाती है । यह उसके आत्मविश्वास और अस्मिताबोध का नतीजा है । उदारीकरण, निजीकरण, बाजारीकरण और ताकथित वैश्वीककरण के दौर में मध्यवर्गीय समाज में आए परिवर्तन के ग्राफ यहाँ साफ – साफ दिखाई पडते है ।

२.३ श्रीलाल शुक्ल

समाज की जाति–व्यवस्था, विषमता, मजहबी जुनून और गाँवो को दयनीय अवस्था का प्रामाणिक चित्रण आज से चालीस वर्ष पूर्व 'राग–दरबारी' में आया है । ग्रामीण जीवन के मूल्य–पतन का यह जीवंत दस्तावेज है । चंद्रकांत वांदिवडेकर का मानना है ।

''व्यंग्य–उपरोध–बिडबन–उपहार प्रचुर शैली में ग्रामीण जीवन के सवाँगीण मूल्य परख अध:पतन का शक्तिशाली चित्रण इसमें है । महात्मा गांधी के आध्यात्मिक मूल्यों पर आधारित राजनीति का राजनीति के अपराधीकरण ने कायाकल्प कर दिया है । यह यथार्थ आगे सभी के अनुभव का विषय बना । राजनितीक बलात्कार से कलंकित देहातों की यह वास्तविकता है । श्रीलाल शुक्ल का शिवपालगंज सामूहिक मानसिकता की भयानक खबर देता है । वास्तविकता का यह अनावरण बीभत्सनग्नता दर्शाता है ।''

२.४ भीष्म साहनी

भीष्म साहनी 'तमस' उपन्यास में पाकिस्तान के निर्माण की पृष्ठभूमि में विद्यमान सांप्रदायिक समस्या का सर्वेक्षण किया है । अंग्रेजी उपन्यासकार चमन नाहल ने 'आजादी' उपन्यास में धर्मांधता का परिणाम अधार्मिकता के भयावह रुप में कैसे होता है इसका संकेत किया है और बताया है कि विभाजन के कारण हुआ विनाश स्वातंत्र्य के पहले परतंत्रता में हुए विनाश से अधिक भयावह था ।

भीष्म साहनी लेखन में 'वास्तविक यथार्थ' को महत्व देते हुए लेखक की वास्तविक जिंदगी से जुडने की भी अपेक्षा करते है । सांप्रदायिकता का 'तमस' किस प्रकार समाज को आच्छादित कर अंधेरे में ढकेलता है कि व्यक्ति अपनी उजडी जिन्दगी को मूक–दर्शक की भांति देखता है । सांप्रदायिक वैमनस्य की जुडे भारतीय जनमानस में इतनी गहरी पेढी हुई है कि आज भी यत्र–तंत्र उसका विस्फोट दिखाई पडता है ।

'तमस' उपन्यास में तत्कालीन ब्रिटीश सरकार की विचारधारा 'फट डालो और शासन करो' की नीति को अपना अजेय हथियार बनाकर एक लम्बे समय तक शासन किया । वही 'तमस' (अंधकार) वर्तमान समाज जीवन पर आच्छादित है । सामाजिक जिम्मेदारी से वही व्यक्ति मूँह मोड लेते है जो समाज के रक्षक है । डिप्टी कमिश्नर रिवर्ड्स का कथन ''डालिंग हुकुमत करनेवाले यह नहीं देखते कि प्रजा में कौन सी समानता पायी जाती है, उनकी दिलचस्पी तो यह देखने में होती है कि वे किन–किन बातों में एक दूसरे से अलग है ।''

'तमस' उपन्यास में मुरादअली का चरित्र देशद्रोही व्यक्ति के रुप में चित्रित किया जाता है । मुरादअली अंग्रेजी अक्सरशाही के इशारे पर एक सीधे–सीधे चमार नत्थू से सुअर मरणाकर एक मस्जिद की सिढियों पर फिकवा देता है, यहीं से दंगो की शुरुआत होती है ।

३. निष्कर्ष

निष्कर्ष के रुप में कह सकते है कि उपन्यास के लिए प्रतिभा का वरदान व केवल प्रचुर मात्रा में आवश्यक है, अपिनु उसके साथ आधुनिक जीवन की जटिलता को समझने के लिए चिंतनशील प्रवृत्ति की भी जरुरत है । जो समकालीन उपन्यासो में परिभिक्षित होती है । सामाजिक और संवेदनशील होने के कारण यर्थाथ के चित्रण के साथ त्याग, सेवा, प्रेम सहयोग, सामाजिकता, कार्यरतता आदि मूल्यों पर आधारित जीवन द्रष्टि की आज बहुत जरुरत है । जिसका ध्यान उपन्यासकारो को है । यही समाज व मानवता के लिए शुभ संकेत है । भव्य और मंगलमय भविष्य की पृष्ठभूमि भी ।

संदर्भ

१. दिवाकर, रामधारीसिंह (१९९८). अकाल संध्या पृ. ९५
२. देसाई, कमलेश विशिष्ट विद्या का अध्ययन पृ. २४८–२४९
३. विवेकी राय, (१९९६). मंगल भवन. पृ. ७२
४. समकालीन भारतीय साहित्य जन–फरवरी ०२, पृ. १८